एस जेतवनवासी चीवरवड्ढको वञ्चितो पुब्बेपि वञ्चितो येवाति वत्वा अतीतं आहरि–

अतीतवत्थु

अतीते एकस्मिं अरञ्ञायतने बोधिसत्तो अञ्ञतरं पदुमसरं निस्साय ठिते रुक्खे रुक्खदेवता हुत्वा निब्बत्ति। तदा अञ्ञतरस्मिं नातिमहन्ते सरे निदाघसमये उदकं मन्दं अहोसि, बहू चेत्थ मच्छा होन्ति। अथेको बको ते मच्छे दिस्वा एकेनुपायेन इमे मच्छे वञ्चेत्वा खादिस्सामीति गन्त्वा उदकपरियन्ते चिन्तेन्तो निसीदि। अथ नं मच्छा दिस्वा–किं अय्य! चिन्तेन्तो निसिन्नोसीति पुच्छिंसु। तुम्हाकं चिन्तेन्तो निसिन्नोम्हीति। अम्हाकं किं चिन्तेसि अय्याति ?

इमस्मिं सरे उदकं परित्तं गोचरो च मन्दो निदाघो च महन्तो। इदानिमे मच्छा किं नाम करिस्सन्तीति तुम्हाकं चिन्तेन्तो निसिन्नोम्हीति। अथ किं करोम अय्याति ?

तुम्हे सचे मय्हं वचनं करेय्याथ अहं वो एकेकं मुखतुण्डकेन गहेत्वा ऐकं पञ्चवण्णपदुमसञ्छन्नं महासरं नेत्वा विस्सज्जेय्यन्ति।

अय्य! पठमकप्पिकतो पट्ठाय मच्छानं चिन्तनकबको नाम नत्थि। त्वं अम्हेसु एकेकं खादितुकामोसीति,न मयं तुय्हं सद्दहामाति।

नाहं खादिस्सामि। सचे पन सरस्स अत्थिभावं मय्हं न सद्दहथ एकं मच्छं मया सद्धिं सरं पस्सितुं पेसेथाति।

मच्छा तस्स सद्दहित्वा अयं जलेपि थलेपि समत्थोति एकं काणमहामच्छं अदंसु–इमं गहेत्वा गच्छथाति।

(धोखा देता) रहा है, और न केवल इस समय ग्रामवासी (चीवरवाले) ने, इस जेतवनवासी चीवरवाले को ठगा (धोखा दिया) है, पहले भी ठगा (धोखा दिया) है।' कह, पूर्व-जन्म की कथा आरम्भ की–

ख. अतीत कथा

पूर्व समय में बोधिसत्त्व, एक जंगल में एक कमल-सरोवर के पास स्थित वृक्ष पर एक वृक्ष-देवता की योनि में उत्पन्न हुए। उस समय गर्मी (के मौसम) में अन्य छोटे तालाबों में पानी का अभाव हो जाता। उसमें बहुत-सी मछलियाँ रहती थीं। एक बगुला उन मछलियों को देख, एक तरीके (युक्ति) से इन मछलियों को ठगकर खाऊँगा' सोच, जाकर, पानी के किनारे चिन्तित-सा (मुंह बनाकर) बैठ गया। उसे देख मछलियों ने–'आर्य! चिन्तित क्यों बैठे हो ?' पूछा।

'बैठा, तुम्हारे लिए चिन्ता कर रहा हूँ!' 'आर्य! हमारे लिए किस प्रकार की चिन्ता कर रहे हो ?'

'इस तालाब में पानी सीमित मात्रा में है, भोजन की कमी है, गरमी भीषण है, अब यह मछलियाँ क्या करेंगी ? मैं बैठा तुम्हारे लिए सोच रहा हूँ ?' 'तो आर्य! (हम) क्या करें ?'

'यदि तुम मेरा कहना करो, तो मैं तुम्हें एक-एक करके चोंच से पकड़ पंचवर्ण-कमलों से आच्छन्न, एक महासरोवर में ले जाकर छोड़ आऊँ।'

'आर्य! प्रथम कल्प से लेकर (आज तक) मछलियों की चिन्ता (=हित) करनेवाला (कोई) बगुला नहीं हुआ। क्या तू हमें एक-एक करके खाना चाहता है ?' हम तुम पर विश्वास नहीं करतीं।

'तुम्हें–नहीं खाऊँगा। लेकिन यदि तालाबवाली मेरी बात पर विश्वास न हो, तो मेरे साथ एक मछली को (पहले) तालाब देखने के लिए भेजो।'

मछलियों ने उसकी बात पर विश्वास कर, यह जल और स्थल दोनों स्थान पर समर्थ है (सोच) एक काणी महामछली दी; और कहा–इसे ले जाओ।

सो तं गहेत्वा नेत्वा सरे विस्सज्जेत्वा सब्बं सरं दस्सेत्वा पुनानेत्वा तेसं मच्छानं सन्तिके विस्सज्जेसि। सो नेसं मच्छानं सरस्स सम्पतिं वण्णेसि। ते तस्स कथं सुत्वा गन्तुकामा हुत्वा साधु अय्य! अम्हे गणिहत्वा गच्छाहीति आहंसु। बको पठमं तं काणमहामच्छमेव गहेत्वा सरतीरं नेत्वा सरं दस्सेत्वा सरतीरे जाते वरणरुक्खे निलीयित्वा तं विटपन्तरे पक्खिपित्वा तुण्डेन विज्झन्तो जीवितक्खयं पापेत्वा मंसं खादित्वा कण्टके रुक्खमूले पातेत्वा पुन गन्त्वा विस्सट्ठो मे सो मच्छो अञ्ञो आगच्छतूति एतेनुपायेन एकेकं गहेत्वा सब्बमच्छके खादित्वा पुन आगतो एकमच्छम्पि नाद्दस।

एको पनेत्थ कक्कटको अवसिट्ठो बको तम्पि खादितुकामो हुत्वा–भो! कक्कटक! मया सब्बे मच्छे नेत्वा पदुमसञ्छन्ने महासरे विस्सज्जिता। एहि तम्पि नेस्सामीति।

मं गहेत्वा गच्छन्तो कथं गण्हिस्ससीति ?

डंसित्वा गण्हिस्सामीति।

त्वं एवं गहेत्वा गच्छन्तो मं पातेस्ससि। नाहं तया सद्धिं गमिस्सामीति।

मा भायि अहं तं सुगहितं गहेत्वा गमिस्सामीति।

कक्कटको चिन्तेसि–इमस्स मच्छे नेत्वा सरे विस्सज्जनं नाम नत्थि। सचे पन मं सरे विस्सज्जेस्सति इच्चेतं कुसलं नो चे विस्सज्जेस्सति गीवमस्स छिन्दित्वा जीवितं हरिस्सामीति। अथ नं एवमाह– सम्म बक! न खो त्वं सुगहितं गहेतु सक्खिस्ससि। अम्हाकं पन गहनं सुगहणं– सचाहं अलेन तव गीवं गहेतु लभिस्सामि, तव गीवं सुगहितं कत्वा तया सद्धिं गमिस्सामीति।

सो तं वञ्चेतुकामो एस मन्ति अजानन्तो साधूति सम्पटिच्छि। कक्कटको अत्तनो अलेहि कम्मारसण्डासेन वियं तस्स गीवं–

उसने उसे ले जाकर, तालाब में छोड़ दिया; और सम्पूर्ण तालाब को दिखाकर, वापस ला उन मछलियों के पास छोड़ दिया। उसने उन मछलियों से तालाब के सौन्दर्य (सम्पत्ति) का वर्णन किया। उन्होंने उसकी बात सुन, जाने की इच्छुक हो, (बगुले से) कहा–'अच्छा! आर्य! हमें लेकर चलो।' बगुला पहले उस काणे महामत्स्य को तालाब के किनारे ले जाकर, तालाब दिखा, सरोवर-तट पर उत्पन्न वरुण-वृक्ष पर स्वयं को छिपाकर उस (मछली) को शाखाओं के बीच में डाल, चोंच से कोंच-कोंचकर मार और मांस खा (मछली के) काँटों को वृक्ष की जड़ में डाल, फिर जाकर 'उस मछली को मैं छोड़ आया, अब दूसरी आये' (कह), इस उपाय से एक-एक को ले जा, सबको खा लेने के पश्चात् आकर देखा तो वहाँ एक भी न दिखायी दी।

केवल एक केकड़ा वहाँ शेष रह गया था। बगुले ने उसे भी खाने की इच्छा से–'भो कर्कटक! मैं उन सब मछलियों को ले जाकर महा-तालाब में छोड़ आया। आ तुझे भी ले चलूंगा।'

'लेकर जाते हुए, मुझे कैसे पकड़ोगे ?'

'डसकर (=चोंच में पकड़कर) लेकर जाऊँगा।'

'तू इस प्रकार ले जाते हुए, मुझे गिरा देगा। मैं तेरे साथ न जाऊँगा।'

'डर मत! मैं तुझे अच्छी प्रकार पकड़कर ले जाऊँगा।'

केकड़े ने सोचा–'इसने मछलियों को (तो) तालाब में ले जाकर नहीं छोड़ा है। यदि मुझे तालाब में ले जाकर छोड़ देगा, तो इसमें इसकी कुशल है; यदि नहीं छोड़ेगा, तो इसकी गर्दन छेदकर, इसका प्राण हर लूंगा।'

उसने कहा–'सौम्य बगुले! तू ठीक से न पकड़ सकेगा। लेकिन हमारा जो पकड़ना होता है, वह पक्का होता है। इसलिए यदि मुझे अपने डंक से तू अपनी गर्दन पकड़ने दे, तो तेरी गर्दन को भली भांति पकड़े, मैं तेरे साथ चलूंगा।'

सुगहितं कत्वा इदानि गच्छाति आह। सो तं नेत्वा सरं दस्सेत्वा वरणरुक्खाभिमुखो पायासि। कक्कटको आह–मातुल! अयं सरो एत्तो त्वं पन इतो नेसीति।

बको पियमातुलको अति भगिनिपुत्तोसि मे त्वन्ति वत्वात्वं एस मं उक्खिपित्वा विचरन्तो मय्हं दासोति सञ्ञं करोसि मञ्ञे पस्सेतं वरणरुक्खमूले कण्टकरासिं, यथा मे सब्बमच्छा खादिता तम्पि तथेव खादिस्सामीति आह।

कक्कयको एते मच्छा अत्तनो बालताय तयो खादिता। अहं पन ते मं खादितुं न दस्सामि। तञ्ञेव पन विनासं पापेस्सामि। त्वं हि बालताय मया वञ्चितभावं न जानासि। मरन्ता उभोपि मरिस्साम। एस ते सीसं छिन्दित्वा भूमियं खिपिस्सामीति वत्वा सण्डासेन विय अलेहि तस्स गीवं निप्पीलेसि।

सो विवटेन मुखेन अक्खीहि अस्सुना पग्घरन्तेन मरणभयतज्जितो–सामि! अहं तं न खादिस्सामि। जीवितं मे देहीति आह।

यदि एवं, ओतरित्व सरस्मिं मं विस्सज्जेहीति।

सो निवत्तित्वा सरमेव ओतरित्वा कक्कटकं सरपरियन्ते पंकपिट्ठे ठपेसि।

कक्कटको कत्तरिकाय कुमुदनालं कप्पेन्तो विय तस्स गीवं कप्पेत्वा उदकं पाविसि। तं अच्छरियं दिस्वा वरणरुक्खे अधिवत्था देवता साधुकारं ददमाना वनं उन्नादयमाना मधुरस्सरेन इमं गाथमाह–

नाच्चन्तनिकतिप्पञ्ञो, निकत्या सुखमेधति। आरधेति निकतिप्पञ्ञो बको कक्कटकामिवाति॥

तत्थ नाच्चन्तनिकतिप्पञ्ञो निकत्यासुखमेधतीति निकति वुच्चति वञ्चना। निकतिप्पञ्ञो वञ्चनपञ्ञो पुग्गलो, ताय निकत्या निकतिया वञ्चनाय, न अच्चन्तं सुखमेधतीति निच्चकाले सुखस्मिञ्ञेव पतिट्ठातुं न सक्कोति एकंसेन पन विनासं–

उसने उसकी ठगने की इच्छा को, 'न समझते हुए' 'अच्छा' कह, स्वीकार किया। केकड़े ने अपने डंक से, लोहार की सड़सी के समान उसकी गर्दन को भली भांति पकड़कर–'अब चल।' कहा। वह उसे ले जाकर, तालाब दिखा वरुण-वृक्ष की ओर उड़ा। केकड़े ने कहा–'मामा! तालाब तो यहाँ है; लेकिन तू यहाँ से ले जा रहा है।'

बगुले ने–'मालूम होता है, तू समझता है कि 'मैं प्यारा मामा और तू मेरी बहन का प्रिय-पुत्र है' कह उठाकर विचरता, मैं तेरा दास हूँ। इस वरुण-वृक्ष के तले (मछलियों के) काँटों के ढेर को देख। जैसे मैं इन सब मछलियों को खा गया; उसी प्रकार तुझे भी खाऊँगा।' कहा।

केकड़े ने–'यह मछलियाँ अपनी मूर्खता से तेरा आहार हुईं। मैं तुझे अपने को खाने न दूंगा। किन्तु तेरा ही विनाश करूँगा। तू अपनी मूर्खता के कारण नहीं जानता कि तू मुझसे ठगा गया (धोखा खा गया)। मरना होगा तो दोनों मरेंगे। देख, मैं तेरे सिर को काटकर भूमि पर फेंक दूंगा', (कह) उसने सँड़सी के सदृश अपने डंक से उसकी गर्दन भींच दी। बगुले ने चौड़े मुंह, आँखों से आँसू गिराते हुए मरने से भयभीत हो–'स्वामी! मुझे जीवन दे। मैं तुझे नहीं खाऊँगा', कहा।

'यदि ऐसा है, तो उतरकर मुझे तालाब में छोड़।'

लौटकर, तालाब पर ही उतर, केकड़े को तालाब-तट पर कीचड़ में रखा। केकड़ा, कैंची से कुमुद-डंठल काटता-सा, उसकी गर्दन काटकर पानी में घुस गया। वरुण-वृक्ष के देवता ने उस आश्चर्य को देख, साधुकार देते (तथा) वन को उन्नादित करते हुए, मधुर स्वर में यह गाथा कही–

धूर्त-बुद्धि (मनुष्य) अपनी अधिक धूर्तता द्वारा सदैव सुख नहीं पा सकता। धूर्त-बुद्धि (अपने किये का फल) भोगता है, जैसे बगुले ने केकड़े (के द्वारा)।

नाच्चन्त निकतिप्पञ्ञो निकत्या सुखमेधति, निकति का अर्थ–ठगने की क्रिया। निकतिपञ्ञो, ठगनेवाला आदमी

पापुणाति येवाति अत्थो। आराधेतीति पटिलभति। निकतिप्पञ्ञोति केराटिकभावा सिक्खितपञ्ञो पापपुग्गलो अत्तना कतस्स पापस्स फलं पटिलभति विन्दतीति अत्थो। कथं ? बको कक्कटकामिव यथा बको कक्कटका गीवच्छेदनं पापुणाति एवं पापपुग्गलो अत्तना कतपापतो दिट्ठधम्मे वा सम्परायं वा भयं आराधेति पटिलभतीति। इममत्थं पकासेन्तो महासत्तो वनं उन्नादेन्तो धम्मं देसेसि।

सत्था-न भिक्खवे! इदानेव गामवासीचीवरवड्ढकेनेस वञ्चितो। अतीतेपि वञ्चितो येवाति इमं धम्मदेसनं आहरित्वा अनुसन्धिं घटेत्वा जातकं समोधानेसि। तदा सो बको जेतवनवासी **चीवरवड्ढको** अहोसि। कक्कटको गामवासी **चीवरवड्ढको** अहोसि। रुक्खदेवता पन अहमेवाति।

बकजातकं

●

२. नन्दजातकं

मञ्ञे सोवरण्णयो रासीति-इदं सत्था जेतवने विहरन्तो सारिपुत्तत्थेरस्स सद्धिविहारिकं आरब्भ कथेसि।

पच्चुपन्नवत्थु

सो किर भिक्खु सुवचो अहोसि वचनक्खमो थेरस्स महन्तेनुस्साहेन उपकारं करोति। अथेकं समयं थेरो सत्थारं आपुच्छित्वा चारिकं चरन्तो दक्खिणागिरिजनपदं अगमासि। सो भिक्खुतत्थगतकाले मानत्थद्धो हुत्वा थेरस्स वचनं न करोति। आवुसो! इदं नाम करोहीति वुत्ते पन थेरस्स पटिपक्खो होति। थेरो तस्स आसयं न जानाति। सो तत्थ चारिकं चरित्वा पुन जेतवनं आगतो। सो भिक्खु थेरस्स जेतवनविहारं आगतकालतो पट्ठाय पुन तादिसोवा जातो। थेरो तथागतस्स आरोचेसि- भन्ते! मय्हं एको सद्धिविहारिको एकस्मिं ठाने सतेन कीतदासो विय होति, एकस्मिं ठाने मानत्थद्धो हुत्वा इदं नाम करोहीति वुत्ते पटिपक्खो होतीति।

(=धूर्त) उस धूर्तता से (=उस ठगी से); **न अच्चनतं सुखमेधति,** सदैव सुख में प्रतिष्ठित नहीं रह सकता, अवश्य ही विनाश को प्राप्त होता है। **आराधेति**=प्राप्त करता है। **निकतिप्पञ्ञोति**-धूर्तता में दक्ष मनुष्य-पापी आदमी, अपने किये पाप-कर्म का फल पाता है, भोगता है। कैसे ? **बको कक्कटकामिव,** जैसे बगुले ने केकड़े से गर्दन छिदवाई; इसी प्रकार पापी पुरुष इस जन्म में, अथवा अगले जन्म में, अपने किये पाप के फलस्वरूप, भय का भागी होता है। इस अर्थ को प्रकाशित करते हुए, महासत्व ने वन को उन्नादित करते हुए धर्मोपदेश किया।

शास्ता ने 'भिक्षुओं! न केवल ग्रामवासी चीवरवाले (भिक्षु) ने इसे ठगा, पूर्व जन्म में भी ठगा है' कह, धर्मदेशना-संग, परिणाम संघटित कर, जातक का आशय उपस्थित किया। उस समय का वह बगुला (अब का) **जेतवन-वासी चीवरवाला,** केकड़ा (अब का) **ग्रामवासी** चीवरवाला। वृक्ष-देवता तो मैं ही था।

बक जातक

●

३९. नन्द जातक

'मञ्ञे सोवण्णयो रासीति····', सारिपुत्र स्थविर के शिष्य से यह गाथा शास्ता ने जेतवन में विहार करते समय कही।

क. वर्तमान कथा

वह भिक्षु सु-भाषी था, वचनसहिष्णु था, और अति उत्साह से स्थविर की सेवा करता था। एक समय (सारिपुत्र) स्थविर, (राजगृह-निकट) शास्ता की आज्ञा ले, चारिका करते हुए, **दक्षिणागिरि**-जनपद पहुँचे। वहाँ पहुँचकर वह भिक्षु अभिमानी होकर स्थविर का कहना नहीं करता था। 'आवुस! यह कर' (कहने पर) स्थविर का प्रतिपक्षी (विरोधी) हो जाता। स्थविर उसका आशय (=चित्त की बात) न समझते (=जानते)। वह वहाँ चारिका कर, फिर जेतवन लौट आये। स्थविर